सबलोग-130

वर्ष 15, अंक 8, अगस्त 2024

प्रकाशन 25.07.2024

ISSN 2277-5897 SABLOG

PEER REVIEWED JOURNAL

सम्पादक

किशन कालजयी

संयुक्त सम्पादक

प्रकाश देवकुलिश

राजन अग्रवाल

ब्यूरो

उत्तर प्रदेश : शिवाशंकर पाण्डेय

मध्य प्रदेश : जावेद अनीस

बिहार : कुमार कृष्णन

उत्तराखण्ड : सुप्रिया रतूड़ी

झारखण्ड : विवेक आर्यन

समीक्षा समिति (Peer Review Committee)

आनन्द कुमार

सुबोध नारायण मालाकार

मणीन्द्र नाथ ठाकुर

सफदर इमाम कादरी

मधुरेश

आनन्द प्रधान

मंजु रानी सिंह

महादेव टोप्पो

विजय कुमार

आशा

सन्तोष कुमार शुक्ल

अखलाक 'आहन'

प्रबन्ध निदेशक

अभय कुमार झा

सम्पादकीय सम्पर्क

बी-3/44, तीसरा तल, सेक्टर-16,
रोहिणी, दिल्ली-110089

+ 918340436365

sablogmonthly@gmail.com, sablog.in

वेब सहायक : गुलशन कुमार चौधरी

सदस्यता शुल्क

एक अंक : 40 रुपए–वार्षिक : 450 रुपए
द्विवार्षिक : 900 रुपए–आजीवन : 5000 रुपए

सबलोग

खाता संख्या-49480200000045
बैंक ऑफ बड़ौदा,
शाखा-बादली, दिल्ली
IFSC-BARB0TRDBAD
(Fifth Character is Zero)

स्वामी, सम्पादक, प्रकाशक व मुद्रक किशन कालजयी द्वारा बी-3/44, सेक्टर-16, रोहिणी, दिल्ली-110089 से प्रकाशित और लक्ष्मी प्रिन्टर्स, 556 जी.टी. रोड शाहदरा दिल्ली-110032 से मुद्रित।

पत्रिका में प्रकाशित आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के हैं, उनसे सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

पत्रिका अव्यावसायिक और सभी पद अवैतनिक।

पत्रिका से सम्बन्धित किसी भी विवाद के लिये न्यायक्षेत्र दिल्ली।

संवेद फाउण्डेशन का मासिक प्रकाशन

पर्यावरण और पारिस्थितिकी

पर्यावरण : खाने का और दिखाने का और : **अनुपम मिश्र** 4
महाविनाश के विश्वव्यापी खतरे : **अनिल प्रकाश** 7
पर्यावर्णीय खतरे की भयावहता : **बसन्त हेतमसरिया** 9
तालाबों से बच सकती है खेती : **पंकज चतुर्वेदी** 12
पारिस्थितिकीय संहार का अपराधीकरण : **प्रमोद मीणा** 15
असन्तुलित विकास के अराजक नतीजे : **दिनेश कर्नाटक** 17
पर्यावरण विमर्श में नदी और पानी : **रुचि श्री** 19
नदी के पुनर्जीवन से जिन्दगी हुई आसान : **रूबी सरकार** 21
बम्ब परियोजना, समुदाय और समाज विज्ञान : **अनुकृति उपाध्याय** 23
तपती धरती के बढ़ते खतरे : **योगेश कुमार गोयल** 25
प्रकृति के साथ मनुष्य का दुर्व्यवहार : **संजय राय** 27
आग से जूझते जंगल : **कुलभूषण उपमन्यु** 29

सृजनलोक

तीन कविताएँ **: कौशल किशोर,** टिप्पणी : **दिविक रमेश,** रेखांकन : **प्रीतिमा वत्स** 30

राज्य

उत्तर प्रदेश / उप चुनाव बनी चुनौती : **शिवाशंकर पाण्डेय** 32
झारखण्ड / जमानत और बदलते समीकरण : **विवेक आर्यन** 34

स्तम्भ

चतुर्दिक / फिलहाल कुछ भी नहीं बदला है : **रविभूषण** 36
यत्र-तत्र / हरिशंकर परसाई : जीवन और जीवनी : **जय प्रकाश** 39
तीसरी घण्टी / रेडियो के मार्फत मंटो के नाटक : **राजेश कुमार** 42
कथित-अकथित / ईरान के नये राष्ट्रपति : नयी बोतल पुरानी शराब : **धीरंजन मालवे** 45
परती परिकथा / राजनीति, साहित्य और स्वाधीनता : **हितेन्द्र पटेल** 47
कविताघर / लिफ्ट में एक खिड़की रहती थी : **प्रियदर्शन** 50

विविध

संस्कृति / लोक-कथा की कथा : **संजीव ठाकुर** 52
मुद्दा / नये आपराधिक कानून : **कुमार कृष्णन** 55
वेब सीरिज / मैं फुलेरा हूँ : **सुनीता सृष्टि** 58
सिनेमा / कोहरे के बीच आशा की किरण : **रक्षा गीता** 61
प्रासंगिक / आदिवासियों की मुखर राजनैतिक पहचान : **अभय सागर मिंज** 63
संगोष्ठी / पर्यावरण पर सार्थक चर्चा : **मधुबाला शुक्ल** 64
पुस्तक समीक्षा / हिन्दी की वाचिक परम्परा के अक्स : **श्रीराम दवे** 65
लिये लुकाठी हाथ / हमारी ब्रेकअप गाथा : **नूपुर अशोक** 66
आवरण : **शशिकान्त सिंह**

अगला अंक : बाजार में शिक्षा

आवरण कथा

प्रकृति के साथ मनुष्य का दुर्व्यवहार

संजय राय

पूँजीवाद और वैज्ञानिक विस्फोट ने प्रकृति पर आधिपत्य की नयी प्रवृत्ति को जन्म दिया और उपभोक्तावादी संस्कृति ने प्रकृति के अधिक से अधिक उपभोग की प्रवृत्ति को। पूँजीवादी वर्चस्व और उपभोक्तावादी संस्कृति ने मिलकर प्रकृति और पर्यावरण पर लगातार हमले किये हैं। यही नहीं वैश्विक शक्तियों ने समूची पृथ्वी के अधिकांश प्राकृतिक संसाधनों पर आधिपत्य जमाने की कोशिश की है। वैश्विक अर्थ-व्यवस्था और कुछ नहीं, दुनिया पर परोक्ष आधिपत्य की एक जबर्दस्त कारगर मुहीम है।

समूचे परिवेश को पर्यावरण कहा जाता है। इस प्रकार पर्यावरण शब्द सम्पूर्ण परिवेश का द्योतक है। हमारे परिवेश पर हो रहे लगातार हमले ने पर्यावरण संकट को जन्म दिया है। यह हमला बाहरी और भीतरी दोनों तरह का है। पर्यावरण संकट की समस्या आधुनिक युग की अपनी समस्या है। नयी जीवन शैली, उपभोक्तावादी संस्कृति और पूँजीवादी व्यवस्था में दुनिया के समूचे पर्यावरण पर वर्चस्व की प्रवृत्ति और सोच तथा व्यवहार की मानव केन्द्रिकता ने मिलकर इस संकट को जन्म दिया है। मानव जीवन ही नहीं आने वाले समय में जीवन मात्र का अस्तित्व ही संकटग्रस्त हो जाएगा। दुनिया के तमाम विद्वान बार-बार इस संकट के बारे में खुल कर बोलते रहे हैं।

पूँजीवाद और वैज्ञानिक विस्फोट ने प्रकृति पर आधिपत्य की नयी प्रवृत्ति को जन्म दिया और उपभोक्तावादी संस्कृति ने प्रकृति के अधिक से अधिक उपभोग की प्रवृत्ति को। पूँजीवादी वर्चस्व और उपभोक्तावादी संस्कृति ने मिलकर प्रकृति और पर्यावरण पर लगातार हमले किये हैं। यही नहीं वैश्विक शक्तियों ने समूची पृथ्वी के अधिकांश प्राकृतिक संसाधनों पर आधिपत्य जमाने की कोशिश की है। इसके लिए युद्ध भी हुए हैं और उस युद्ध को जायज ठहराने के लिए तमाम छल-प्रपंच भी रचे गये हैं। वैश्विक अर्थ-व्यवस्था और कुछ नहीं, दुनिया पर परोक्ष आधिपत्य की एक जबर्दस्त कारगर मुहीम है।

ऊपर जिन परिस्थितियों की चर्चा की गयी है, पर्यावरण संकट उन्हीं परिस्थितियों के रासायनिक समीकरण की उपज है। मनुष्य ने पर्यावरण पर आधिपत्य स्थापित करने की कोशिश की। पर्यावरण के साथ मनुष्य ने यह छल विकास के नाम पर किया। पुष्पम् ए. कुमार ने ठीक ही लिखा है, 'पर्यावरण के साथ मनुष्य का दुर्व्यवहार विकास का चोला पहनकर आया।' स्पष्ट है कि तथाकथित विकास की अवधारणा पर्यावरण विरोधी है। विकास का मतलब मान लिया गया है–भौतिक सम्पन्नता। यह मतलब ही 'प्राकृतिक' के ठीक विपरीत ठहरता है। इसमें तीसरी दुनिया के देशों के प्राकृतिक संसाधनों की लूट भी शामिल है। यश टंडन विकास की वर्तमान स्थिति की आलोचना करते हैं और आज विकास किस रूप में हो इस ओर ध्यान खींचते हुए लिखते हैं, ''प्रकृति और पर्यावरण के सन्दर्भ में आज जिस 'टिकाऊ विकास' की बात की जा रही है, वह पूँजीवादी विकास से कभी नहीं हो सकता, क्योंकि वह ...प्राकृतिक संसाधनों की लूट पर आधारित विकास है। सच्चा टिकाऊ विकास आज पूँजीवादी विकास के अस्वीकार और प्रतिरोध के रूप में ही हो सकता है।'' साफ है कि विकास का पूँजीवादी मॉडल प्रकृति और

लेखक युवा कवि और आलोचक हैं तथा सेठ आनन्दराम जयपुरिया कॉलेज, कोलकाता में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं।
+919883468442
roysanjoy99@gmail.com

पर्यावरण को ताक पर रखकर काम करता है। समाज में व्यापक पैमाने पर इसका अस्वीकार और प्रतिरोध आवश्यक है।

औद्योगिक विकास के बाद देश और दुनिया में पर्यावरण पर जो संकट आये, उनका स्वरूप प्रदूषण वाला था। वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण और मिट्टी प्रदूषण प्रचुर परिमाण में हुए। प्रौद्योगिकी के विकास के बाद ई-प्रदूषण या ई-कचरा दुनिया के लिए मुसीबत साबित हुआ। ये सभी प्रदूषण मिलकर ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन के जिम्मेदार हैं। इसका मतलब यह भी निकलता है कि ये पर्यावरण संकट किसी देश विशेष की सीमा में आबद्ध नहीं हैं। यह समूची पृथ्वी की समस्या है।

सभ्यताएँ और विकास की तमाम अवधारणाएँ मानव केन्द्रित रही हैं। इस प्रकार मानवेतर प्रजातियाँ चाहे-अनचाहे मनुष्य के उपभोग की प्रवृत्ति का शिकार होती रही हैं। प्रदूषण एक ऐसा मसला है जिसका असर जीवों की हर प्रजाति पर है। प्रदूषण के रूप में सबसे अधिक गन्दगी पैदा करने वाला जीव मनुष्य है और प्रदूषण के जहर से मानवेतर प्रजतियाँ नष्ट हो रही हैं, खत्म हो रही हैं। मनुष्य के उपभोग की बलि चढ़ रही हैं तमाम प्रजातियाँ और जैव विविधता खतरे में हैं। उपर्युक्त बातों से दो निष्कर्ष निकलते हैं। एक, मनुष्य दुनिया का सबसे गन्दा प्राणी है और दूसरा, मनुष्य दुनिया का सबसे हिंसक प्राणी है। विज्ञान का अहिंसक इस्तेमाल भी हो सकता है। इस दृष्टि से नये-नये अनुसंधानों की जरूरत है। शुभु पटवा लिखते हैं, ''पर्यावरण की दृष्टि स्व-सन्तुलक, स्व-समायोजक और स्व-शोधक होनी चाहिए। प्रकृति में तो यही खूबी सहज विद्यमान है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी में यह दृष्टि सहज विद्यमान नहीं हो सकती। तब यह तय करना जरूरी है कि वैज्ञानिक अनुसंधानों की दिशा ऐसी होनी चाहिए जो मानव को हिंसा की बनिस्बत अहिंसा की ओर ले जाए और प्रकृति के साथ नाहक संघर्ष की जगह उसके साथ एक सामंजस्य और सहयोग की ओर आकर्षित करे। हमें यह मानना चाहिए कि जागतिक और जैविक तौर पर हम प्रकृति की व्यवस्था के ही अंग हैं और इसके साथ हम जीवन्त और अहिंसक रूप से सहयोग करें।'' यहाँ तीन बातें स्पष्ट होती हैं। एक कि प्रकृति का अपना जीवन्त तरीका है, वह चीजों को अपने तई नष्ट नहीं करती और प्रकृति का हर तोड़-फोड़ पुनर्निर्माण को प्रेरित होता है। दूसरा, हमें वैज्ञानिक अनुसंधानों को अहिंसात्मक कोण से अंजाम देना होगा। तीसरा, हमें यह मान लेना होगा कि हम प्रकृति का एक हिस्सा भर हैं प्रकृति के मालिक नहीं।

पर्यावरण पर हमारे उपभोग की वस्तुओं का काफी असर पड़ा है। बहुतायत की मात्रा में खनिज पदार्थों का उपयोग होने लगा है। रेफ्रिजरेटर, एयरकण्डीशनर जैसी उपभोक्तावादी संस्कृति की वस्तुओं का इस्तेमाल भी काफी बढ़ा है। नयी टेक्नोलॉजी की ये वस्तुएँ सीएफसी जैसी खतरनाक गैस के सहारे चलती हैं। इधर जहरीली गैसों वाले वाहनों का इस्तेमाल भी काफी बढ़ा है। इन सभी चीजों का हमारे पर्यावरण पर काफी गहरा असर हो रहा है। पर्यावरण काफी जहरीला होता जा रहा है। असीम श्रीवास्तव और आशीष कोठारी इसके कारणों की पड़ताल करते हुए लिखते हैं, ''यह सिर्फ बढ़ती आबादी का ही नतीजा नहीं है बल्कि हमारी बदलती जीवन शैली की भी देन है।'' नित नयी वस्तुओं की तलाश, वैभव और शान-ओ-शौकत की बदलती जिन्दगी ने इस तरह के पर्यावरणीय खतरे पैदा किये हैं। मोबाइल और कम्प्यूटर के रोज नये मॉडल सामने आ रहे हैं और थोड़े से समय में ही पुराने पड़ जा रहे हैं। इससे जो कचरा पैदा हो रहा है, उसे डिस्पोज करने के तरीके अभी विकसित नहीं हुए हैं। जितेन्द्र भाटिया ने लिखा है, ''पुराने इलेक्ट्रॉनिक सामान, टॉर्चों, बिजली के तारों, जाम हुई कैसेटों और कम्प्यूटर के अस्थि-पंजर का एक विषैला, नष्ट न किया जा सकने वाला एक बहुत बड़ा ढेर यह विश्व लगातार तैयार कर रहा है और यही शायद हमारी विकासशील सभ्यता का भयानक उपसंहार भी है। अन्ततः हम सबके साथ इस विश्व को भी इसी विष के ढेर में फना होकर खत्म हो जाना है शायद।'' विष के इस ढेर के निर्माण में प्लास्टिक की भी काफी भूमिका है। डिब्बा बन्द या पैकेज्ड चीजों के बढ़ते इस्तेमाल ने प्लास्टिक के उपयोग को बढ़ाया है। ग्रीनपीस के रॉबर्ट एडवर्ड प्लास्टिक के कचरे से उत्पन्न होनेवाले खतरे से आगाह करते हैं। उनका मानना है कि प्लास्टिक की थैलियाँ हमारे शहरों और कस्बों के पर्यावरण को विषाक्त कर हमारा दम घोंट रही हैं। एक सर्वे के मुताबिक भारत में विभिन्न प्रकार के प्लास्टिकों की उत्पादन क्षमता 1991 में 10,00,000 टन थी जो अब बढ़कर 50,00,000 टन हो गयी है। प्रति व्यक्ति प्लास्टिक की खपत 1990-91 में 0.8 किलोग्राम प्रतिवर्ष थी जो 2000-01 में बढ़कर 3.2 किलोग्राम प्रतिवर्ष हो गयी है। प्लास्टिक चीज ही ऐसी है कि उसे नष्ट नहीं किया जा सकता। मनुष्य के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले इसके प्रभावों के तमाम अध्ययन डरानेवाले हैं। इसकी बढ़ती खपत पर्यावरण के लिहाज से काफी खतरनाक है। हमारा पर्यवरण खतरे के भीषण दौर से गुजर रहा है। यह सिर्फ पर्यावरण का ही संकट नहीं, यह हमारे समूचे जीव-जगत के अस्तित्व का संकट है।

■